नागार्जुन की जनवादिता

स्नातक भाग -3
(हिन्दी प्रतिष्ठा)
पंचम पत्र

बाबा नागार्जुन के संबंध में सर्वाधिक विचार व्यक्त किए जाते हैं, वे किसी के लिए जनता के कवि थे तो किसी के लिए यायावर तो किसी के लिए एक ऐसे कवि जो कहीं भी, किसी के पास जाकर पुरस्कार या उससे जुड़ी राशि ऐंठ लेता है। वाकई वे जनता के बीच जाकर झूम-झूमकर कविता करने वाले प्रिय कवि थे, और साथ ही सरकारी आयोजनों में जाकर उनकी खिल्ली उड़ाकर पुरस्कार तक ऐंठ लेने वाले कवि भी। दरअसल नागार्जुन सरकारी पैसे को जनता का पैसा मानते थे और उसे प्राप्त करना अपना हक समझते थे। यही नहीं इन पैसों को जनता पर ही खर्च भी करदिया करते थे और खुद अपनी ~~फक्क~~ फक्कड़पन और

मस्ती में लौट आते थे।

नागार्जुन पुरस्कार

राजकीय मंच से प्राप्त करके भी उसी मंच से बारूदी छर्रे की खुशबू ढूँढने लगते थे, सत्ता की काली करतूतों को उजागर करने लगे, राजसिंहासन पर बैठे शासक को उसकी औकात बता दी। यह कार्य कोई जनकवि ही कर सकता है सत्ता लोलुप कवि नहीं।

बाबा की 1943 की कविता 'सिन्दूर तिलकित भाल' में कवि को अपना 'तरउनी' गाँव याद आता है, साथ ही याद आती है वहाँ की लीचियाँ, वहाँ के आम, धान की कमुदिनी, तालमखान ~~और होती है~~, और होती है वहीं अपना समय बिताने की इच्छा। यहाँ अपनी जड़ों से लगाव की अभिव्यक्ति होती है जिसे कवि अंत-अंत तक छोड़ना नहीं चाहता।

नागार्जुन ने इसी क्रान्ति के तर्ज पर आप मैं भी किसी क्रांति का सपना देखा था जो आर्थिक विषमता व सामाजिक भेदभाव को समाप्त करदे। वे इसी लाल रंग को अपनी बाद की कई कविताओं में साधा है। 1948 की उनकी दो कविताओं में इसकी झलक देखी जा सकती है - 'कोर्ट की दीवार पर / चुपचाप जो पोस्टर अभी चिपका गया / वह कौन था ? पुनः वे लिखते हैं:-

"होशियार, कुछ देर नहीं है,
लाल सवेरा आने में।
लाल भवानी प्रकट हुई
सुना कि तेलंगाने में।।"

चाहे वह तेलंगाना हो या नक्सलबाड़ी या भोजपुर - वे इस सामाजिक बदलाव व क्रांति के प्रबल पक्षधी थे। अपनी मशहूर कविता 'भोजपुर' में वे लिखते हैं:-

"यही धुआँ मैं ढूँढ रहा था,
यही आग मैं खोज रहा था,
यही गंध थी मुझे चाहिए
बारूदी छर्रे की खुशबू!
भोजपुरी भाई सोंधी है
चमका है इस मिट्टी में
इन्हीं इन्हीं इन नथुनों में इसको भर लूँ
अपना जन्म स-कारथ आज कर लूँ।"

जवाहरलाल नेहरू या इंदिरा गाँधी का विरोध करते हुए उन्होंने जिस शैली में कविताएँ लिखीं, हिंदी में वैसी कविताएँ दुर्लभ हैं। निराला ने भी नेहरू पर कई कविताएँ लिखीं, पर नागार्जुन ने जिस चुटीले व्यंग्यों का सहारा लिया, वह सबसे अलग है। जब ब्रिटेन की महारानी भारत आईं, तो नागार्जुन ने इसे देश का अपमान समझा और लिखा :

"आओ रानी हम ढोएंगे पालकी।
यही हुई है राय जवाहरलाल की।"

जब इंदिरा गाँधी ने आपातकाल की घोषणा की तो नागार्जुन इसे बर्दाश्त नहीं कर सके और उन्हें 'बाघिन' तक कह डाला। इंदिरा गाँधी का विरोध करते हुए उन्होंने लिखा – 'इंदु जी, इंदु जी, क्या हुआ आपको? / बेटे को तार दिया / बोर दिया बाप को।"

नागार्जुन ~~कबीर~~ की कविताओं की विविधता ही उन्हें सरहपा, कबीर और निराला की पंक्ति में खड़ा करती है। वे किसान आंदोलन से जुड़े सहजानंद सरस्वती और राहुल सांकृत्यायन के बहुत करीब थे। इसीलिए अंत-अंत तक वे किसानी चेतना से भी जुड़े रहे। किसानों की आर्थिक स्थिति और उनकी बदहाली पर उनकी कई कविताएं हैं, जिनमें अकाल की पृष्ठभूमि पर

'अकाल और उसके बाद,' 'अन्न पहल ही पहल है,' 'बाकी बच गया पिपाशा', 'नया तरीका' प्रमुख है।

वस्तुतः नागार्जुन का जुड़ाव लोक जीवन से था। वे सरल ग्रामीण बोध के कवि थे, जिनके लिए फसलों का होना एक अर्थ रखता है। इसी तरह 1975 की एक कविता में चुहों और उसके 'कुछिया दानों' का जिक्र है, जिनको देखकर किसान की तबियत खिल सकती है। नागार्जुन ने 1966 में प० बंगाल के दमनकारी सरकारी चेहरे पर कविता लिखी -

"जली ठूंठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी, शासन की बंदूक।"